किताबें और बच्चे

पल्लव

ऐसा क्यों है कि बड़े और प्रसिद्ध रचनाकार आमतौर पर बच्चों के लिए नहीं लिखते। हिन्दी में यह काम बाल साहित्य के विशेषज्ञों के लिए आरक्षित माना जाता है और परिणाम स्वरूप बच्चों को नंदन वन और चंपक वन की कथाओं से आगे कुछ खास नहीं मिल पाता। ऐसा विश्व की बड़ी भाषाओं को तो छोड़िए भारतीय भाषाओं में भी नहीं होता। और इसका परिणाम यह है कि हम बच्चों में साहित्य और किताब के प्रति दिलचस्पी जगा पाने में असफल ही रहे हैं। किताब पढ़ना केवल किताब पढ़ना नहीं होता बल्कि पाठक के तौर पर खुद को विचार प्रक्रिया में शामिल करना भी है। इस लिहाज से बच्चों के लिए किताब एक मुश्किल मसला बन जाता है क्योंकि आप बहुत सघन वैचारिक खुराक देंगे तो वह पढ़ेगा ही नहीं और मनोरंजन से भर देंगे तो फिर विचार का क्या होगा? रास्ता बनाया जा सकता है और वह रास्ता है भागीदारी का। यदि सुन्दर प्रस्तुति के साथ लेखक पाठ प्रक्रिया में नन्हे पाठक को शामिल कर सके तो निश्चय ही किताब असरदार होगी। दूसरी बात है कि उपदेश प्रवृत्ति से बाल साहित्य को बचना चाहिए, भला यह कैसी विडंबना है कि जब अभिभावक या बड़े ही उपदेश को पसंद नहीं करते और न उन पर अमल करना जरूरी समझते हैं तब बच्चों से इसकी अपेक्षा कैसे की जा सकती है? तीसरी बात बल साहित्य में भी थोड़े प्रोफेशनलिज्म की है अर्थात् बच्चों को ध्यान में रखकर छपाई और प्रस्तुति हो। घटिया कागज और छपाई पर महानतम साहित्य भी अग्राह्य लगेगा।

इस लिहाज से इधर कुछ संस्थाओं ने अच्छे काम किए हैं जिनको देखा जाना चाहिए।

I

रूम टू रीड जैसी संस्थाएं बच्चों के लिए किताबें प्रकाशित करती हैं। अभी-अभी इस संस्था ने पांच किताबों का नया सेट प्रकाशित किया है जिसमें प्रभात, त्रिपुरारी शर्मा, सुनीता और मनोहर चमोली द्वारा लिखी गई रचनाएं हैं। पहली किताब प्रभात की है 'राई और चौंरी'। यह एक गाय चौंरी और एक लड़की राई की कहानी है जिसे सुनीता ने ठेठ राजस्थानी ढंग के चित्रों से सजाया है। कहानी यह है कि बारिश में लोग-बाग अपने पालतू पशुओं को चराई के लिए हरे-भरे स्थानों पर भेज देते हैं ताकि वे ताजी घास इत्यादि खाकर सेहतमंद हो जाएं। यहां राई की गाय भी चराई के लिए पहाड़ गई हुई है लेकिन वह बीच में अचानक आ जाती है जिससे पिता नाराज हो जाते हैं और फरमान सुनाते हैं कि इसे कोई कुछ खाने को नहीं देगा ताकि कल फिर यह पहाड़ पर चली जाए। राई इस बात पर पिता से अलग मत रखती है और उसका मानना है कि इसको घर की याद आई होगी इसलिए आ गई। कहानी बहुत संक्षिप्त और छोटे से कलेवर में है। मुख्य बात यह है कि धीरे-धीरे मनुष्य जीवन से तिरोहित होते जा रहे पशुओं के प्रति जिस संवेदनशीलता का परिचय यहां मिलता है वह नया और अब दुर्लभ अनुभव है। नया इसलिए कि शहरी जीवन से पशु अब गायब हो चुके हैं और गांव में भी इनकी उपस्थिति छीजती जा रही है। बात यह है कि यदि हम संवेदनशील हैं और किसी के अहसास समझने की कोशिश कर सकते हैं तो हम वाकई मनुष्य हैं बाकी क्या कहना? त्रिपुरारी शर्मा रंगमंच से जुड़ी शिक्षिका हैं और लेखन में भी सक्रिय। उनकी दो किताबें रूम टू रीड ने एक साथ प्रकाशित की हैं 'आम और कोयल' तथा 'गिलहरी'। ये दोनों किताबें लोककथाओं जैसी हैं। यानी एक बार की बात है

सरीखी। मजेदार बात यह कि लोककथाएं जैसी होने पर भी इन कहानियों को लिखा त्रिपुरारी जी ने ही है यानी ये लोककथाएं नहीं हैं। बात इतनी-सी है कि गिलहरी कैसे पेड़ पर चढ़ना सीखी या आम मीठा क्यों हुआ? इनके उत्तर वैज्ञानिक ही क्यों दें? कलाकार या कथाकार क्यों नहीं? कल्पनाशीलता का अभाव कैसे मिटेगा? रास्ता यह हो सकता है। गप्पें और किस्से कल्पनाशील ही नहीं बनाते बल्कि मस्तिष्क को नए-नए ढंग से सोचना भी सिखाते हैं। मतलब हमेशा हम गूगल बाबा की शरण में जाने की आदत डालें या थोड़ा वजन खुद भी लेने का माद्दा पैदा करें? याद आया हमारे एक सर थे जो हमें टिग्नोमेट्री पढ़ाते थे। वे इससे संबंधित सभी मानों के स्वयं निर्मित फार्मूले बनाते थे और उससे परीक्षा में आसानी होती थी। हुआ यह कि पास-वास हो जाने पर भी आज तक हमको वे मान याद नहीं हो पाए, हमें चोर रास्ता ही जो मालूम था। ऐसी ही किताब है 'चांद का स्वेटर' जिसमें मनोहर चमोली ने एक ऐसी लड़की की कहानी सुनाई है जो ठण्ड के दिनों में सोचती है कि चांद को भी तो ठण्ड लगती होगी। बताइए? आपने कभी सोचा था ऐसे? जो बच्ची चांद की चिंता कर रही है वह क्या अपने आसपास ठिठुरते लोगों के बारे में नहीं सोचेगी? बढ़िया। सुनीता चित्र बनाती हैं। उन्होंने यहां एक कहानी भी लिखी है। किताब का नाम है- 'बबूल का पेड़'। यह उन बच्चों की कहानी है जो गर्मी में परेशान होते-होते एक पेड़ लगा देते हैं और एक दिन उनके मामा इस पेड़ के नीचे अपना ट्रेक्टर खड़ा कर रहे हैं। यहां बोलचाल के ऐसे अनेक शब्द हैं जो 'शुद्ध हिन्दी' के नहीं हैं लेकिन इनको देखना-पढ़ना सुखद है। इन सभी किताबों में चित्रों पर अलग से और बड़ी बात की जा सकती है। छोटे-छोटे वाक्यों और गद्य वाली इन कहानियों में चित्रों का होना किताबों को और उपयोगी बनाता है। चित्र इन किताबों को प्राणवान बनाते हैं, रंगीन और सुन्दर। सुनीता के अलावा यहां इन किताबों में जगदीश जोशी, कनिका नायर और अतनु राय ने चित्र बनाए हैं। इन किताबों में कमी कुछ है तो यह कि इनकी उपलब्धता सीमित है। इनकी बिक्री नहीं हो सकती, ये कुछ खास स्कूलों में भेजी जाएंगी।

प्यारे भाई रामसहाय
कहानियां-स्वयं प्रकाश; चित्र-फजरूद्दीन
नेशनल बुक ट्रस्ट, नेहरू भवन
5, इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज-II,
वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070
मूल्य-55 रुपए
ISBN 978-81-237-6578-5

II

स्वयं प्रकाश ने कभी बच्चों के लिए एक उपन्यास लिखा था- 'परमाणु भाई की दुनिया में'। अब उन्होंने एक पूरी किताब कहानियों की बच्चों के लिए लिख दी है -'प्यारे भाई रामसहाय'। यह एक शृंखला की तरह बाल पत्रिका चकमक में प्रकाशित हुई थी और कहना न होगा कि पढ़ने वाले बच्चों और बड़ों ने इसे बहुत पसंद किया। यहां स्वयं प्रकाश की कथा प्राविधि यह थी कि वे अपने एक काल्पनिक मित्र रामसहाय को चिट्ठियां लिखते हैं और हर चिट्ठी में बचपन का एक किस्सा या शरारत। चिट्ठी का विचार ही सुन्दर है क्योंकि इधर धीरे-धीरे पत्र लिखना खत्म होता जा रहा है और संवाद के नाम पर फोन, एसएमएस या ईमेल रह गए हैं। हम जानते हैं कि पत्र केवल सन्देश नहीं देते वे हमको विचार करना सिखाते हैं और पत्रविहीन समाज असल में विचारहीन समाज होता जाता है। यहां इस शृंखला से चुनकर दस कहानियां दी गई हैं। ध्यान से देखने पर ये वे कहानियां हैं जो ऊपर से मजे-मजे की बातें करती हैं लेकिन इनके अन्दर से कुछ गंभीर निकल रहा है। स्वयं प्रकाश सावधान रचनाकार हैं। वे विचारधारा को साहित्य के लिए जरूरी समझते हैं और जानते हैं कि उपदेशों से बच्चों का कुछ भी भला नहीं होने वाला, इसलिए यहां संदेश भले निकलता हुआ दिखाई दे लेकिन थोपा नहीं लगता और अस्वाभाविक तो बिलकुल नहीं। उदाहरण के लिए, पहली ही कहानी 'बेर की गुठली' लेते हैं। कहानी यह कि बचपन में डराया जाता है कि गुठली पेट में चली गई तो सर पर पेड़ उग आएगा। तब भले ही ऐसी बात भलाई के लिए कही जाती रही हो लेकिन इसके दूरगामी परिणाम होते हैं। बच्चों को काल्पनिक भय दिखाकर उनके भीतर कैसे ग्रंथियां बना दी जाती हैं और पूरा जीवन ये बच्चे इन ग्रंथियों से जूझते रहते हैं। यहां बेर की गुठली को केवल एक प्रतीक समझें या उदाहरण, बात दूर तलक जाती है। ऐसे ही एक कहानी 'भाषा की चुहल' है जिसमें स्वयं प्रकाश भाषा और बच्चों के अनौपचारिक संबंधों की व्याख्या करते हैं। बच्चे हरकेश की कैसी व्याख्या करते हैं और कैसे नए-नए अर्थों को खोजने के लिए उत्सुक होते हैं, यह देखने योग्य है। जैसे एक प्रसिद्ध फिल्मी गीत की पैरोडी देखिए-

पल्लव
लगभग एक दशक से हिन्दी साहित्य का अध्यापन, हिन्दी की लघु पत्रिका 'बनास जन' के संपादक। संप्रति : हिन्दू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय में साहित्य के प्राध्यापक हैं।

जो वादा किया, वो भुलाना पड़ेगा
जो कांदा दिया, वो कटाना पड़ेगा
जो गीला किया, वो सुखाना पड़ेगा
नहीं तो पुलिस को बुलाना पड़ेगा।

यहां भी आमतौर पर बड़ों का हस्तक्षेप होता है और हम देखते हैं कि भाषा के साथ संबंध कैसे औपचारिक होते जाते हैं। जब हमारी भाषा खिल-खिल नहीं होगी, कृत्रिम और कागजी जिसमें दरख्वास्त तो लिखी जा सकती है प्रेम पत्र नहीं। इस कहानी के अंत में स्वयं प्रकाश ने लिखा है- भाषा के साथ हमारी यह चुहल ऐसी ही थी जैसे अपनी मम्मी से कभी-कभी मजाक कर लेना। ऐसा करने से तो प्यार बढ़ता है न? गहरी बात यह है कि हम जो समाज बना रहे हैं उसकी बुनियाद की तरफ भी तो ध्यान दिया जाए। बच्चे हों और भूत-प्रेत की बातें न हों? यहां भी हैं लेकिन अंदाज बिलकुल नया। आखिरी कहानी में स्वयं प्रकाश एक किस्सा सुनाते हैं जब वाचक बचपन में दोस्तों के साथ शमशान जाता है ताकि गणित के पेपर में सारे सवाल आ जाएं, कहानी का आखिरी हिस्सा देखिए- 'बालकिशन ने जैसे ही राख उठाने के लिए हाथ बढ़ाया कहीं कोई कुत्ता बड़ी जोर से 'भूऊऊ' करके रोया। बालकिशन एकदम सकपका कर पीछे हटा। जक्कू तो चीख पड़ा और मुड़कर भागा। इसी समय चिता के पीछे से हाथ में गिलास लिए बिखरे बालों वाली एक मोटी और काली-कलूटी औरत उठ खड़ी हुई। उसके दांत बाहर निकले हुए थे, आंखें लाल थीं। उसे देखते ही हममें से कईयों की चीख निकल गई। सब भागे। मुन्नू धक्का खाकर गिर पड़ा। उसकी कमीज पर राधेश्याम का पांव रखा गया। मुन्नू उठा तो कमीज चर्र से फट गई। उसे लगा औरत ने उसे पकड़ लिया है। वह बिलबिलाकर रो पड़ा। बालकिशन और राधेश्याम एक तरह से उसे उठाकर घर तक ले आए।

इस साहसिक अभियान के बहादुर यात्रियों में से कम से कम तीन ने कई साल बताया कि उस दिन उनकी निकर गीली हो चुकी थी और इसी हाल में बिस्तर में घुसकर वे सोच रहे थे कि इससे तो एक साल फेल हो जाना शायद ज्यादा ठीक रहता। तो अर्थ यह हुआ कि बच्चों ने जब करके देखा तो इस भाग्यवाद और बाबावाद से खुद निबटे। 'सप्पू बन गया चाचा नेहरू', 'नहीं होना बीमार' सरीखी कहानियां कोरा मनोरंजन ही नहीं करतीं। वैसे यहां कोरे मनोरंजन के लिए भी शुद्ध हास्य और मस्ती की कथाएं हैं और उन्हें पढ़ना सचमुच मजेदार है। 'मुझे वह थप्पड़ आज तक याद है', 'नाटक में बवाल' और 'अरे, वैज्जी कहां हैं?' जैसी कहानियां होना सचमुच बाल साहित्य के लिए उपलब्धि मूलक है। इन कहानियों को पढ़ते हुए स्वतन्त्रता के बाद बन रहे नए भारत के दृश्य भी दिखाई दे जाते हैं और तत्कालीन समृद्ध सांस्कृतिक परिवेश की झलक देखना सुखद लगता है। स्वयं प्रकाश का बचपन अपने ननिहाल इंदौर में बीता था और अकारण नहीं कि इन कहानियों पर मालवा की बोली की मिठास आ गई है। छोटे से कलेवर में सुन्दर छपाई और रंगीन चित्रों के साथ पुस्तक सभी को पढ़ने के लिए निमंत्रित करती है। स्वयं प्रकाश जैसे वरिष्ठ रचनाकार इस काम को जिम्मेदारी समझ कर निरंतर करें तो हिन्दी पाठकीयता में वृद्धि ही होगी।

मोनिया
कथा-हेमंत; चित्र-इरफान
गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति,
राजघाट, नई दिल्ली-110002
मूल्य : 10 रुपए
ISBN 978-81-922066-0-8

III

मोनिया अर्थात् मोहनदास करमचंद गांधी, हमारे गांधीजी। बचपन में नेशनल बुक ट्रस्ट की एक किताब बहुत चाव से सबने पढ़ी होगी- सबका साथी सबका दोस्त, जिसमें गांधीजी के बचपन के डर की सचित्र कहानियां होती थीं। लेकिन यह किताब कितने बच्चों ने पढ़ी होगी? सौ करोड़ के भारत में कितने बच्चों तक यह पहुंच सकी होगी? फिर हम ही इस बात से व्यथित होते हैं कि नई पीढ़ी गांधी जैसे महामानव को नहीं जानती। जाने तो तब जब आप उसमें दिलचस्पी पैदा करें। जब से टीवी पर छोटा भीम सीरियल में लड्डू खाने के प्रसंग आने लगे हैं लड्डू जैसे बीती मिठाई के दिन फिरे हैं। अंग्रेजी में खोजिए आपको किसी भी यूरोपियन महापुरुष पर बच्चों के लिए भी ढेर किताबें मिल जाएंगी। बहरहाल, हमारे यहां भी अच्छा काम हुआ है तो उसे रेखांकित किया जाए। मोनिया के बहाने बालक मोहनदास की कहानी बच्चों के लिए लिखी गई है और यह संक्षिप्त किन्तु रोचक और प्रभावी है। इसे पढ़कर निश्चय ही नई पीढ़ी में दिलचस्पी पैदा हो सकेगी कि गांधी को जाना जाए। कुल 15-16 पृष्ठों में बड़े और रंगीन चित्रों के माध्यम से गांधी कथा कही गई है। सब कुछ बढ़िया है बस भावुकता में एक गड़बड़ हो गई। एक वाक्य देखिए- 'बड़ा होकर मोनिया ने मां की कोख को उजागर किया। उसने भारत मां की तकदीर को ऊंचा किया।' (पृष्ठ-11) भारत क्यों नहीं? भारत मां या भारत माता क्यों? देश को इस तरह के भावुकतावादी संबोधनों से इंगित करने से कोई राष्ट्र प्रेम नहीं बढ़ जाता। प्रेम बढ़ता है देश की संस्कृति, भूगोल, लोगों और प्रकृति से गहरे अनुराग से। बहरहाल, किताब का स्वागत किया जाना चाहिए। ◆